रेवती रमण होने का अर्थ

सम्पादन
सतीश कुमार राय
अशोक गुप्त

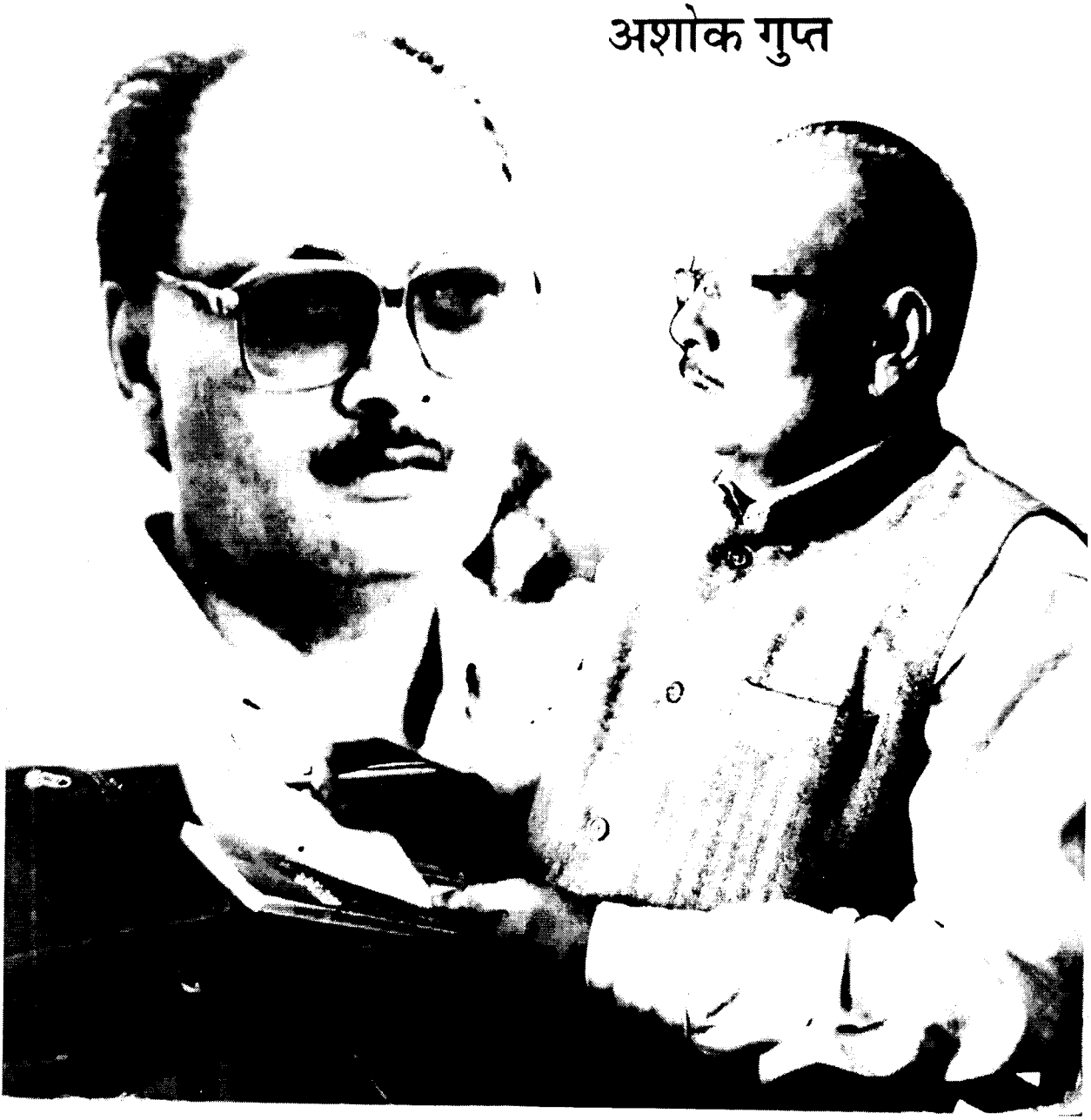

रेवती रमण होने का अर्थ

सम्पादक
सतीश कुमार राय
अशोक गुप्त

अभिधा प्रकाशन

प्रथम संस्करण
2020
सर्वाधिकार
सम्पादक

प्रकाशक
अभिधा प्रकाशन
रामदयालु नगर, मुजफ्फरपुर-842002

अक्षर-संयोजन
एस. कुमार

मुद्रक
बी० के० ऑफसेट, दिल्ली - 32

मूल्य
225/- (दो सौ पच्चीस रुपये)

Rewati Raman Honey Ka Arth
***Edited By* Dr. S.K. Rai & A. Gupta** **Rs. 225.00**

अनुक्रम

सम्पादकीय	: सतीश कुमार राय	7
प्रस्तुति	: अशोक गुप्त	21
1.	साथ चलते हुए	: विश्वनाथ प्रसाद तिवारी	23
2.	हिन्दी साहित्य के चर्चित आलोचक...	: रिपुसूदन श्रीवास्तव	26
3.	आलोचना का कालयात्री	: मदन कश्यप	32
4.	रेवती रमण की आलोचकीय सक्रियता	: रामप्रवेश सिंह	36
5.	डॉ. रेवती रमण की आलोचना-दृष्टि	: विजयशंकर मिश्र	42
6.	साक्षात्कार	: राकेश रंजन	46
7.	साक्षात्कार	: कल्याण कुमार झा	57
8.	समय की रंगत	: अंजना वर्मा	66
9.	एक आलोचक का कवि	: पूनम सिंह	71
10.	अजनबियों के संग चल रहा थका अकेला	: राकेश रंजन	77
11.	कविता और मानवीय संवेदना	: जगदीश विकल	84
12.	युवा समीक्षक का प्रबुद्ध समीक्षात्मक विवेक?	: वेदप्रकाश अमिताभ	90
13.	समकालीन कविता का परिप्रेक्ष्य	: कृष्णचन्द्र लाल	94
14.	समकालीन कविता का परिप्रेक्ष्य...	: रवीन्द्र उपाध्याय	99
15.	रचना की तरह आलोचना	: रमेश ऋतंभर	103
16.	रेवतीरमण का 'समकाल'	: प्रेमशंकर रघुवंशी	105
17.	'कविता में समकाल' एक समीक्षा कृति	: श्रीराम परिहार	108
18.	संघर्ष तपी काव्य-साधना का संधान	: शेखर शंकर मिश्र	115
19.	जातीय संवेदना के सजग साहित्य चिन्तक	: संध्या पाण्डेय	121
20.	जातीय मनोभूमि की तलाश	: अनन्तकीर्ति तिवारी	125
21.	सहज-सरल, स्वाभिमान की आवाज	: सुशांत कुमार	130
22.	'आवाज के परिन्दे' और उनके सलीम अली	: अनामिका	134
23.	समकालीन कविता की पुख्ता पहचान	: रामेश्वर द्विवेदी	141
24.	कवियों की गली से गुजरता कवि आलोचक	: उज्ज्वल आलोक	147
25.	पुस्तकों के फ्लैप से		153
चिट्ठी-पत्री			155
चित्रावली			191

❐

जातीय संवेदना के सजग साहित्य चिन्तक

–संध्या पाण्डेय

साहित्य के सजग प्रहरी की दृष्टि सदैव उस मनोभूमि की खोज में रहती है, जिसे आत्मसात कर आगे बढ़ने पर राष्ट्र का कल्याण होता है। ऐसे ही वर्तमान समय में अपने लेखन-कर्म की निरंतरता से साहित्य-जगत को समृद्ध करने वाले मनीषियों में प्रो० रेवती रमण जी का नाम आदरपूर्वक लिया जाता है। साहित्य चिन्तक, आलोचक एवं कुशल शिक्षक के रूप में ख्यात प्रो० रेवती रमण जी की सर्जना का क्षेत्र बहुआयामी है। हिन्दी साहित्य की महत्त्वपूर्ण कृतियों पर अनेक पुस्तकें लिखकर इन्होंने साहित्य प्रेमियों एवं विद्यार्थियों/शोधार्थियों हेतु मार्गदर्शक का गुरुतर कार्य किया है। आपने कवि-विशेष एवं रचना-विशेष पर केन्द्रित अनेक पुस्तकें लिखीं, जिनमें द्विवेदीयुगीन महत्त्वपूर्ण कवि मैथिलीशरण गुप्त जी पर केन्द्रित 'भारतीय साहित्य के निर्माता : मैथिलीशरण गुप्त' पुस्तक अपना विशिष्ट स्थान सुनिश्चित करती है।

साहित्यिक अवधारणाओं के बदलते मानदण्डों एवं वर्तमान राजनीतिक-व्यवस्था के इस युग में गुप्तजी की कविताओं का स्वर निश्चित तौर पर युगीन चेतना एवं सांस्कृतिक भावनाओं का प्रतिनिधित्व करती है। ऐसे ही राष्ट्रसेवी कवि गुप्तजी के रचना-विधान पर प्रो० रेवती रमण ने विस्तार से अपनी लेखनी चलाई। गुप्तजी की रचनाधर्मिता एवं युगीन परिप्रेक्ष्य से जुड़ा कोई भी पक्ष ऐसा नहीं है, जो इनकी दृष्टि से अछूता रह गया हो। गुप्तजी के रचनात्मक वैशिष्ट्य को दर्शाते हुए पुस्तक की भूमिका में वे लिखते हैं–

"गुप्तजी का कवि-कर्म पराधीन भारतवासियों को पूर्वजों के शील की शिक्षा से परिचित कराने का प्रभावशाली माध्यम है।" (भूमिका)

मैथिलीशरण गुप्त के व्यक्तित्व-कृतित्व एवं उनके रचनात्मक उद्देश्य को उजागर करने हेतु उन्होंने अपनी पुस्तक को भूमिका व उपसंहार सहित नौ अध्यायों में विभाजित किया, जिसमें युगीन परिस्थितियों एवं रचनात्मक विधान

पर चिन्तन-मनन करते हुए तत्कालीन काव्य-भाषा के बदलते स्वरूप का विश्लेषण किया है। गुप्तजी की रचनाओं में प्रस्तुत राष्ट्रीय-सांस्कृतिक व सामाजिक प्रसंगों पर टिप्पणी करते हुए वे कहीं भी आलोचक की भूमिका में नहीं रहते बल्कि विवेचनात्मक शैली में उन्होंने गुप्तजी की रचनाओं पर अपनी टिप्पणी दी। इनका कहना है कि "गुप्तजी की कविता एक खुले व्यक्तित्व का प्रकाशन है, जो अपने समय की आवाज से कान लगाए एक अशांत सामाजिक की छवि प्रस्तुत करती है।" (पृ०-9)

युगीन जीवन की विविध विडम्बनाओं जिनमें नारी की स्थिति, आर्थिक संकट का सामना करते हमारे किसान वर्ग तथा राजनीतिक परिप्रेक्ष्य के ऊहापोह को अपनी काव्य में प्रस्तुत करने के कारण 'राष्ट्रकवि' की पदवी से विभूषित गुप्तजी को इन्होंने 'स्वदेशी संस्कारों और जातीय संवेदना के बड़े कवि के रूप में तुलसी के बाद प्रमुख स्थान दिया है।'

गुप्तजी के काव्य-संसार की पृष्ठभूमि द्विवेदी युग में रखी गयी किन्तु द्विवेदीयुगीन प्रवृत्तियों के साथ-साथ इनकी रचनाओं में स्वच्छन्दतावाद अथवा छायावादी काव्य-प्रवृत्तियों की तलाश इस पुस्तक में गहनतापूर्वक की गई है। 'पंचवटी' की कुछ काव्य-पंक्तियों का उदारण प्रस्तुत करते हुए, उन्होंने इसे छायावाद युग की रचनाओं की श्रेणी में रखा है। उदाहरणस्वरूप उन्होंने निम्न पंक्तियाँ उद्धृत की हैं—"चारु चन्द्र की चंचल किरणें खेल रही हैं जल-थल में,/ स्वच्छ चाँदनी बिछी हुई है अवनि और अम्बर तल में।" (पृ०-29)

सतर्क टिप्पणी देते हुए उन्होंने लिखा है—"पंचवटी' पर छायावादी काव्य की छाया बिल्कुल स्पष्ट है। गुप्तजी इसमें प्रकृति का मानवीकरण करते हैं।' (पृ०-29)

साहित्य सदैव ही सामाजिक सरोकारों से होकर गुजरता रहा है। युग-विशेष के संदर्भ में जब समीक्षक किसी कृति का अवलोकन करता है तो वह किसी न किसी रूप में रचनाकार के युग से जुड़ता है। ऐसे ही द्विवेदीयुग की तत्कालीन समस्या सामंतीप्रथा एवं जमींदारों द्वारा शोषित व प्रताड़ित गरीब मजदूर एवं किसान वर्ग पर लिखी गई कृतियों 'भारत-भारती' व 'किसान' नामक लघु खण्डकाव्य को आपने अपनी पुस्तक में प्रमुखता दी। किसान जीवन की विविध कठिनाइयों को आधार बनाकर लिखी गई गुप्त जी की कृतियों पर आपने बड़े ही सहज किन्तु गांभीर्य भाव से लिखा है—"किसानी चेतना उनके कवि-व्यक्तित्व के लिए अत्यंत स्वाभाविक थी। वे किसानों की नियति को

अनदेखा नहीं कर सकते थे। अर्थात् किसानों को आलम्बन बनाकर गुप्तजी ने यदि कविता-रचना की, तो मानना पड़ेगा कि इसमें उनकी ज्ञानात्मक संवेदना और संवेदनात्मक ज्ञान का मणिकांचन योग है।" (पृ.-57)

किसान जीवन की व्यथा-कथा पर अपनी राय व्यक्त करने के साथ-साथ नारी-मनोभावों के विविध आयामों को प्रस्तुत करती 'साकेत' नामक कृति की भी इन्होंने लम्बी व्याख्या की है। 'साकेत' के महाकाव्यात्मक स्वरूप की चर्चा करते हुए, आपने गुप्तजी के 'साकेत' की तुलना तुलसीदास' के 'मानस' से की है उदात्तता के संदर्भ में इन्होंने 'मानस' के बाद 'साकेत' को ही प्रमुख स्थान दिया है। साथ ही नारी-विशेष के संदर्भ में गुप्तजी की प्रमुख कृतियों 'साकेत', 'यशोधरा' एवं 'विष्णुप्रिया' को केन्द्र में रखा है एवं भारतीय समाज में नारी की स्थिति एवं उपस्थिति का सजग मूल्यांकन प्रस्तुत किया है। गुप्तजी की रचनाओं में रूपायित नारी की स्थिति पर अपने विचार व्यक्त करते हुए उन्होंने लिखा है—"नारी अपने पूरे विन्यास में गुप्तजी के लिए दलित और शोषित ही है। गुप्तजी के काव्य में यही नारी, आत्मसंघर्ष के साथ आयी है। यह प्रायः सुविधा-संपन्न घरों से आयी है, पर उसके व्यक्तित्व की आभा खुलती-खिलती है बाह्य जीवन के संघर्षों के बीच ही।" (पृ.-78)

गुप्तजी की कृतियों के समग्र मूल्यांकन के क्रम में इन्होंने प्रमुखतः 'साकेत' और जयभारत' जैसी ख्यातिलब्ध साहित्य सर्जना को अपनी पुस्तक के केन्द्र में रखा है। 'साकेत' और 'जयभारत' जैसे महाकाव्य को इन्होंने अपनी पुस्तक में जो स्थान दिया, वह कवि/आलोचक की राष्ट्रीय-सांस्कृतिक भावधारा व नारी-सम्मान के प्रति विशेष स्वरूप को अभिव्यक्त करता है। इन दोनों ग्रंथों पर अपने वैचारिक समीकरणों को रूपायित करते हुए इन्होंने अपनी पुस्तक में लिखा है—"साकेत' जैसा महाकाव्य लिखने के लिए राष्ट्रकवि को जैसी समाधि की आवश्यकता पड़ी थी, वैसी समाधि का साक्ष्य 'जयभारत' में नहीं मिलता, तथापि यह एक अविस्मरणीय गौरव ग्रन्थ है, शायद इसलिए भी कि इसमें युधिष्ठिर मानवता की जय को प्रतिरूपित करते हैं।" (पृ.-46)

अपनी पुस्तक में इन्होंने न केवल गुप्तजी के रचना-विधान में आए वैचारिक संदर्भों का अनुशीलन किया, अपितु साथ ही साथ उनके काव्य के कला पक्ष पर भी सार्थक टिप्पणी प्रस्तुत की। ब्रजभाषा के व्यामोह से मुक्ति के केन्द्र में गुप्तजी को रखते हुए उन्होंने लिखा है—"गुप्तजी के काव्य-विवेक की समकालीनता समझ में आती है। उन्होंने गोस्वामी तुलसीदास के अनुभवों से

लाभ उठाया और अन्ततः कानों को खटकने वाली खड़ी बोली को कोमलकान्त पदावली की भाषा में ढाल सकने में सफलता पायी।" (पृ.-87)

गुप्तजी के काव्य में प्रयुक्त छन्द-विधान, भाषा आदि पर लिखते हुए हम कहीं भी उन्हें आलोचक की भूमिका में नहीं देखते। वस्तुतः वे एक जागरूक शिक्षक एवं कुशल समीक्षक के समान सहजतापूर्वक सभी पक्षों पर अपनी राय व्यक्त करते हैं। अन्ततः साहित्य जगत में गुप्तजी के महत्ता को दर्शाते हुए वे कहते हैं—'गुप्तजी का महत्त्व इस तथ्य में है कि उनकी बहिर्मुखी लक्ष्यनिष्ठ आसक्ति पराधीन भारतवासी को अपनी हीनता ग्रंथि से उबारकर स्वातंत्र्य पथ पर अग्रसर होने की शक्ति और प्रेरणा दे सकी।' (पृ.-52)

कवि-चिन्तक एवं सर्जक के व्यक्तित्व का प्रभाव उसकी कृतियों में सहज ही परिलक्षित होता है। 'भारतीय साहित्य के निर्माताः मैथिलीशरण गुप्त' पुस्तक में अपने स्वभाव के अनुरूप वे कहीं भी जटिल आलोचक की भूमिका में नहीं हैं, अपितु एक कुशल एवं निरपेक्ष व्याख्याता के रूप में उन्होंने सतर्क अपनी राय प्रस्तुत की है। इस प्रकार हम देखते हैं कि राष्ट्र की सांस्कृतिक अस्मिता के प्रति जागरूक कवि गुप्तजी के मनोभावों एवं रचना-विधान को सहज, सरल एवं व्याख्यात्मक रूप में प्रस्तुत करते हुए उन्होंने स्वतंत्र रूप से अपनी लेखनी चलाई है। साथ ही अपनी पूरी पुस्तक में वैचारिक टकराहट एवं अनावश्यक टीका-टिप्पणी से बचने का प्रयास किया है।

❑